सेवा-कथाके चक्रकी प्रक्रिया

– असित शाह.

अपने यहाँ नित्य भगवत्सेवा और अनवसरमें कथा करवेको उपदेश दियो है. श्रीगुसाँईजी आज्ञा करे हैं ''सदा सर्वात्मना सेव्यो भगवान् गोकुलेश्वरः, स्मर्तव्यो गोपिकावृन्दे क्रीडन् वृन्दावने स्थितः''. माने सेवाके अवसरमें श्रीठाकुरजी श्रीगोकुलमें नन्दालयमें बिराज रहे हैं ऐसी भावना करनी चहिये. फिर अनवसरमें आप गौचारण करने श्रीवृन्दावन पधारके वहाँ क्रीडा कर रहे हैं ऐसो स्मरण करनो चहिये. पुनः सेवामें उपस्थित होवे तब श्रीठाकुरजी पाछे श्रीगोकुल लौटे ऐसी भावना करनी चहिये. या उपदेशकू आचरणमें लानेके पहले याको आशय समझनो चहिये, यासू भाव बढनेकी प्रक्रिया समझनी चहिये.

अपने कोई लौकिक भावसंबंधको विचार करें तो अपन अनजाने भी ये ही काम बिना उपदेशके करते ही होवे हैं. अपन वाकू 'सेवा' या 'कथा' नहीं कहे हैं इतनो अन्तर है. मान लो एक बच्चीकी स्कूलमें परीक्षा चल रही है. तो वाकी माँ बच्ची घरमें होय तब बच्चीकू जगाके नहाने भेजनो, चाय-नास्ता देनो, पढाने बैठानी, समयपे तैयार करके बस / स्कूल तक पहुँचानी आदि करनेमें व्यस्त रहे है. फिर? घडी आगे बढती जाय वैसे माँको मन भी आगे बढे है— अब बच्ची जगहपर बैठ गई होगी, अब परीक्षा शुरु हो गई होगी, अब बच्ची लिख रही होगी, अब लिखनो पूरो करके पढ रही होगी ... . यों माँको समय कब व्यतीत हो जाय ये खयाल भी नहीं रहे है. जब बच्ची घर लौटे तब फिर वाकी देखभालमें माँ व्यस्त हो जावे है. यदि बच्ची कहे कि आज मोकू देरी हो गई और वाके कारण तकलीफ भई तो माँ दूसरे दिन कैसे देरी न होय वाके विचार और आयोजनमें लग जाय है. सो वही सेवा-कथाको चक्र है या नहीं?

मानो किसीके बूढे माँ / बाप या पति / पत्नी / बच्चा कहीं ट्रेनमें प्रवासमें जानेवाले होय. तो उनकू समयपे सामानसमेत स्टेशन पहुँचानेमें अपन व्यस्त हो जावे हैं. टिकट-पैसा-खानो-पीनो-दवाई-कपडे-कम्बल सब जमाके पैक करनेमें लग जावे हैं. ट्रेनमें बैठाकर वापस आ जाएँ तब भी मन तो लग्यो रहे है— अब वे खा रहे होंगे, अब सो गये होंगे, अब ट्रेनसू उतरे होंगे, अब मुकामपे पहुँच गये होंगे, अब नहा-धोकर चाय-नास्ता कर रहे होंगे, अब घुमने निकले होंगे ... . कोई मालिक नौकरकू कामसू बाहरगाँव भेजे तो भी ऐसो ही होवे है. मारे आतुरताके अपन फोन करके बारबार कुशल और हालचाल भी अक्सर पूछ लेवे हैं. अरे पुलिस कोई चोरकू फँसानेके लिये जाल बिछाके वाके फँसनेकी राह देखे तब उनको मन भी ऐसे ही चलतो होवे है. सो मन तो ऐसे ही लगे है.

भक्तिमें इतनो अन्तर है कि अपनकू सभानतासू प्रयास करनो अपेक्षित है. या लिये अवसरमें मन लगाके सेवा करनी चहिये और अनवसरमें मन लगाके स्मरण. मनको तो ये देख्यो भयो रस्ता है, सो या चक्रमें वाकू लगानेपे वह जुडतो ही चल्यो जायेगो भक्तिमें. यासू सरल रस्ता कोई नहीं है.

व्रजभक्तनको निरोध याही प्रक्रियासू भयो थो. श्रीभागवतमें उनकी ऐसी ही दिनचर्या बताई है. छठे वल्लभाख्यानमें वाहीको भावानुवाद है : ''दिवसे सर्व श्यामा मली रसरूपतणो जश गाये जी ... वासर निर्वाह एम करे सखी सायंकाले पेखे जी ... यशोदाजी ले भामणा सुतने राई-लूण उतारे जी ... उष्णोदक सोंधो भेलीने अंग अंघोल करावे जी ... मातानुं मन रंजवा व्हालो आरोग्या बहु स्वादे जी ... सकल व्रजमां पोढिया ... ए लीला मारे मन वसो.'' उनके लिये प्रभुने प्रयास कियो करके उनकू पता ही नहीं चल्यो कि कब मन लग गयो. ''स्वभावस्य अन्यथाभावो न वै शक्यः कथञ्चन, अतः त्रिविधजीवेषु त्रिविधा भगवत्कृतिः'' यों श्रीआचार्यचरण आज्ञा करे हैं.

अपनकू भी श्रीआचार्यचरण आश्वस्त करे हैं कि अनवतारकाल होय तो भी चिन्ताकी कोई बात नहीं है. ''कौण्डिन्यो गोपिकाः प्रोक्ताः गुरवः साधनं च तत्, भावो भावनया सिद्धः साधनं न अन्यद् ईष्यते.'' अपन व्रजभक्तनके भावनकी भावना करके सेवा-कथाको चक्र मन लगाके चलायेंगे तो अपनो मन भी जुड सके है ; ''सुनि सूर सबनकी यह गति जे हरिचरण भजे.''